International Journal of Arts & Education Research

तपेन्द्र कुमार चौधरी*[1], डॉ0 (श्रीमती) मालती तिवारी

शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा, म0प्र0।

शोध निर्देशक, प्रवक्ता, शासकीय महाविद्यालय रीवा, म0प्र0।

## पृष्ठभूमि

हर शिक्षा व्यवस्था की अपनी विलक्षणताएं, चुनौतियां एवं समस्याएं होती हैं। आज वैश्वीकरण के फलस्वरूप विश्व सन्दर्भ में इन विलक्षणताओं एवं समस्याओं को एक नई आकृति, दिशा एवं गति प्राप्त हो रही है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था के साथ-साथ लगभग यही स्थिति प्रायः सभी सार्क देशों में भी दृष्टिगत है। हमारे यहाँ प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर की संस्थाओं का परिमाणात्मक दृष्टि से जिस द्रुत गति रूप में विकास हुआ है, इसके चलते गुणवत्तापरक शिक्षा एवं शिक्षण उपलब्ध कराने के प्रति एक नया आयाम उभरा है जिसका कोई भी जागरूक राष्ट्र अनदेखी नहीं कर सकता। यह प्रश्न संख्यात्मक वृद्धि बनाम गुणवत्ता का नहीं वरन् गुणवत्तापूर्ण सर्वसुलभ एवं अभिगम्य शिक्षा व्यवस्था रचने का है।

शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा, प्रत्येक शिक्षा व्यवस्था का अविछिन्न अंग होती है। यह समाज एवं राष्ट्र के चरित्र, उसकी संस्कृति एवं लोकाचार से घनिष्ट रूप से जुड़ी होती है। 21वीं सदी की विकासशील प्रौद्योगिकी के दबाव, विशेष तौर से सूचना प्रौद्योगिकी के सन्दर्भ में संवैधानिक लक्ष्यों, राज्य की नीतियों के निर्देशक सिद्धान्तों, सामाजिक-आर्थिक समस्याओं, नई प्रत्याशाओं एवं आकांक्षाओं के उभरते नए क्षितिज, नूतन ज्ञान के ज्यामितिक विकास की गति एवं सन् 2020 ई0 तक भारतीय समाज को नालेज सुपर-पावर के रूप में अपनी पहचान बनाने के संकल्पों के आलोक में भावी शिक्षा व्यवस्था से एक उपयुक्त साधकत्व प्रदान करने की अपेक्षा है। इस सन्दर्भ में शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के कार्यक्रमों को एक नवीन परिप्रेक्ष्य में रखते हुए, उन्हें सार्थक भूमिका निर्वहन की जिम्मेदारी सौंपनी होगी जिससे शिक्षा की प्रक्रियाओं में परिव्याप्त दोषों, विसंगतियों एवं कृत्रिमताओं पर प्रभावी रोक लग सके।

## भारतीय सोच मिथ्यात्व की ओर

जब देश आज़ाद हुआ तो तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था को ही चालू रखने की जो त्रुटि, उसका परिणाम हमारे सामने है। 57 वर्ष बीत जाने के बाद भी आज हम देश को एक सशक्त, कल्पनाशील एवं प्रभावी शिक्षा व्यवस्था नहीं दे पाये हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जिस प्रकार के दोष हमारी सामान्य शिक्षा व्यवस्थाओं में विद्यमान है, वे शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा में भी उसी मात्रा में देखे जा सकते हैं। हमारी शिक्षा जनाकांक्षाओं एवं समाज की आवश्यकताओं से नहीं जुड़ सकी है। इसमें भारतीय संस्कृति की पहचान बनी भक्ति **'उदार चरितानाम् तु वसुधैव कुटुम्बकम्'** को सुदृढ़ बनाने की सामर्थ्य संचित नहीं हो सकी है। यह शिक्षा व्यवस्था अपने सेवार्थियों में अपेक्षित दायित्व एवं मूल्यबोध विकसित नहीं करती, स्वावलम्बन के स्थान पर परावलम्बन की ओर ले जा रही है। यह जीवन कौशलों एवं मूल्यों के संवर्द्धन से विमुख होकर,

जीवनयापन के लिए नौकरी दिलाने के पाठ्यक्रमों (जॉबओरिएण्टेड कोर्सेस) को अनावश्यक महत्व दे रही है। ज्ञान, अभिवृत्ति, मौलिक चिन्तन एवं सीखने की भूख जगाने के उद्देश्यों से हटकर सूचना प्रधान शिक्षा एवं शिक्षण व्यवस्थाओं की ओर आकर्षित हो रही है। इसे भारतीय सोच के मिथ्यात्व की ओर बढ़ने का ही दु:खद उदाहरण कहा जा सकता है। कुल मिलाकर यह कहने में संकोच नहीं होना चाहिए कि हमारी शिक्षा व्यवस्था की सार्थकता सन्देह के घेरे में सिमट गई है। शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के बारे में भी यही विडम्बनापूर्ण स्थिति बनी हुई है।

विगत कुछ दशकों में इस व्यवस्था को सचमुच की स्वदेशी व्यवस्था बनाने की वकालत यदा कदा होती रही है। किन्तु यह कहने में अत्युक्ति नहीं होगी कि जैसे जैसे उपचार होता गया, रोग बढ़ता ही गया। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद ने अपने दस्तावेज़ 'गुणवत्तापूर्ण शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम परिप्रेक्ष्य' (1998) में यह अंगीकार किया है स्वदेशी संकल्पना के तहत अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रमों को नया स्वरूप देने की दृष्टि से उनमें पाई जाने वाली रिक्तताएं अत्यन्त व्यापक एवं स्पष्ट रूप से परिलक्षित हैं। उनमें दृष्टिगत न्यूनताओं एवं खाइयों को पाटने के लिए प्रभावी सेतुओं का निर्माण परमाश्वयक का निर्माण परमाश्यक है। इनमें से कतिपय सेतु इस प्रकार हैं: अध्यापक शिक्षा की एक ऐसी राष्ट्रीय प्रणाली विकसित करना जो भारत की सांस्कृतिक अस्मिता, एकता एवं विविधता पर आधारित होने के साथ सामयिक परिवर्तनों एवं निरन्तरता की शाश्वत् धारा के अनुरूप हो, संवैधानिक उद्देश्यों की सम्प्राप्ति एवं नई सामाजिक व्यवस्था के अभ्युदय में समर्थन देना, समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप अपनी भूमिकाओं के निर्वाह कर सकने का सामर्थ्य रखने वाले व्यावसायिक दृष्टि से कुशल शिक्षक तैयार करना तथा अध्यापक शिक्षा के स्तर को समुन्नत करना, शिक्षकों की व्यवसायिक एवं सामाजिक प्रस्थिति को संवर्धित करना तथा उनमें प्रतिबद्धता (कमिटमेंट) की भावना विकसित करना। इस परिप्रेक्ष्य में हमारी सबसे बड़ी चुनौती है-एक व्यापक, गतिशील, मूल्यों पर आधारित, संवेदनशील, उत्तरदायी, वैश्वीकरण की विवशताओं से निपटने का सामर्थ्य रखने वाली दूरदर्शी शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा व्यवस्था विकसित करना।

## शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के प्रसंगौचित्य से जुड़ा परिदृश्य

शिक्षा को विकास से जोड़ने की दृष्टि से उसे 'सार्वभौमीकरण' की ओर ले जाने का उद्देश्य विगत दशकों में तेज़ी से उभरा है। आज विश्व के सभी राष्ट्र इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्रयासरत हैं। भारत में इसे सन् 2007 ई0 तक पूरा करने का संकल्प मुखरित हुआ है। इसलिए शिक्षा के औपचारिक एवं निरौपचारिक माध्यमों को विस्तारित किया गया है। विद्यालयीय शिक्षा में अभिगम्यता एवं बच्चों के नामांकन को बढ़ाया गया है। साथ ही, विद्यालयों में उनके ठहराव को लेकर प्राथमिक शिक्षा के सन्दर्भ में 'जिला शिक्षा प्राथमिक कार्यक्रम' (डी0पी0ई0पी0) के तत्वावधान में काफी कोशिशें की जा रही हैं। इन सभी प्रयासों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का मुद्दा भी विशेष रूप से महत्वपूर्ण बन गया है। 7 से 14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की प्रतिबद्धता का आधार हमारा संविधान रहा है। जहाँ इसी दशक में इस लक्ष्य की प्राप्ति सुनिश्चित करनी है, वहाँ उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा की अभिगम्यता को भी बढ़ाने

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved. 

की चिन्ता एवं तत्सम्बन्धी प्रयास केन्द्र एवं राज्य स्तरों पर विचाराधीन हैं। अभी हाल में माध्यमिक शिक्षा स्तर तक सभी तत्सम्बन्धित आयु वर्ग (6-18) के अभ्यर्थियों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्राविधानित करने के प्रस्ताव को अपेक्षित गम्भीरता के साथ लिया जा रहा है। इन प्रयासों से सभी को शिक्षा उपलब्ध तो हो सकेगी किन्तु वह सही अर्थ में शिक्षा यानि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा हो इसकी जिम्मेदारी भी लेनी होगी। इधर प्राथमिक शिक्षा स्तर पर 'सर्व शिक्षा अभियान' के फलस्वरूप नामांकन में तेज़ी से वृद्धि होने की सम्भावना को नकारा नहीं जा सकता। परिणामस्वरूप इतने बड़े पैमाने पर प्राथमिक/उच्च प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर की शिक्षा में गुणवत्ता का मुद्दा सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक बना रहेगा जिसके लिए 'गुणवत्तापूर्ण' शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा की व्यवस्था उपलब्ध कराना एक गम्भीर चुनौती है।

इधर शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के वर्तमान परिदृश्य को लेकर कई बुनियादी प्रश्न उठाये जा रहे हैं। क्या अध्यापक शिक्षा की संस्थाओं में अपेक्षित स्तर का दायित्व एवं दिशा बोध है ? क्या उनके पाठ्यक्रमों की सहायता से कुशल, प्रतिबद्ध एवं आस्थावान् शिक्षक तैयार हो पा रहे हैं ? क्या उनमें आयोजित क्रियाकलाप देश की वर्तमान आवश्यकताओं एवं उसकी सांस्कृतिक धरोहर के अनुरूप संस्कार एवं मूल्य विकसित कर रहे हैं ? आज जीवन के लगभग हर अनुक्षेत्र-सेना, उद्योग, प्रबन्ध, चिकित्सा एवं प्रौद्योगिकी आदि में नई उपसंस्कृति पनप रही है तथा कार्य के नए मानक एवं जीवन के समर्थनीय विकास के नए पैमाने गढ़े जा रहे हैं, किन्तु क्या यह स्थिति 'अध्यापक शिक्षा' जैसे अनुक्षेत्र के लिए भी समान रूप से लागू होती है ? यदि ऐसा नहीं है, तो इसके कारण क्या हैं ? इस स्थिति के लिए कौन जिम्मेदार है ? हमें गम्भीरता से विचार करना होगा।

केन्द्र एवं राज्य स्तरों पर अब तक गठित सभी शिक्षा आयोगों तथा शिक्षा समितियों ने ऐसी गुणवत्तापूर्ण शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा पर बल दिया है जो शिक्षा व्यवस्थाओं की आवश्यकताओं की पूरा कर सके। माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने यह बताया कि माध्यमिक स्तर पर शैक्षिक पुर्नरचना के लिए अध्यापकों का व्यवसायिक प्रशिक्षण महत्वपूर्ण कारक होता है। शिक्षा आयोग (1964-66) ने भी यह संकेत दिया कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी पर आधारित विश्व में लोगों की सुरक्षा, उनके कल्याण एवं समृद्धि का निर्धारक शिक्षा ही होती है तथा शिक्षा में गुणात्मक सुधार सुनिश्चित करने की दृष्टि से अध्यापक शिक्षा का अच्छा होना अत्यावश्यक है। शिक्षा नीति (1986) एवं संशोधित कार्य प्रस्ताव (1992) ने इस बात पर जोर दिया कि अध्यापक शिक्षा एक सतत् प्रक्रिया है तथा शिक्षक प्रशिक्षण के सेवापूर्व एवं सेवाकालीन अंग परस्पर परिपूरक है।

इन दोनों ही नीतिनिर्धारक अभिलेखों में यह दर्शाया गया है कि शिक्षकों की क्षमताओं एवं व्यावसायिक प्रतिबद्धता में पर्याप्त न्यूनता है, सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम आधुनिक शिक्षाशास्त्र की अद्यतन संकल्पनाओं से केवल अछूते ही नहीं, प्रत्युत उनमें भारी गिरावट भी आई है, शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा कार्यक्रमों में केवल सेवापूर्व व्यवस्था ही लागू है, सेवाकालीन प्रशिक्षण के लिए प्रभावी व्यवस्थायें नहीं गढ़ी गयी हैं तथा अपेक्षित सुविधाओं का भी अभाव है, घटिया स्तरहीन अध्यापक शिक्षा संस्थाओं की संख्या बढ़ी है, उनमें कई तरह की अपचारी एवं आपत्तिजनक गतिविधियों को प्रोत्साहन मिला है तथा राज्य शैक्षिक अनुसंधान और

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved. 

प्रशिक्षण परिषदों, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद और नवगठित राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद एवं उनके क्षेत्रीय कार्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभागों द्वारा प्रदत्त शैक्षिक समर्थन अपर्याप्त ही नहीं, बल्कि निष्प्रभावी भी है। इधर सेवापूर्व अध्यापक शिक्षा की अवधि को विस्तारित कर, उसमें प्रायोगिकी तथा विद्यालयीय अनुभव के कार्यक्रमों को प्रायोजित करने की जोरदार संस्तुति की जा रही है जिससे गुणवत्ता से जुड़े मुद्दों का संतोषजनक समाधान ढूँढा जा सके।

शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा स्तर पर गठित डायट एवं माध्यमिक स्तर पर गठित शिक्षक महाविद्यालय एवं उच्च अध्ययन संस्थानों के अस्तित्व में आ जाने के बाद भी सेवापूर्व प्रशिक्षण में अपेक्षित गुणवत्ता का आयाम नहीं जुड़ सका है। वहाँ के पाठ्यक्रमों, अध्यापक शिक्षा के लिए नियुक्त शिक्षकों एवं प्रशिक्षकों तथा कार्यक्रमों में गुणवत्ता के प्रमुख मानकों-कुशलता, प्रतिबद्धता, निष्पत्ति एवं उत्कृष्टता का अनुप्रयोग यदि कठोरतापूर्वक किया जाए तो लगभग 5 प्रतिशत संस्थायें भी खरी नहीं उतर पायेंगी। ऐसा क्यों है ? निकट भविष्य में भी इस स्थिति के सुधार के लक्षण क्यों नहीं दिखाई पड़ रहे हैं ? राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद एवं राष्ट्रीय आकलन एवं प्रत्यायन परिषद् के मध्य संयुक्त रणनीति के स्वीकार किए जाने तथा शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा की संस्थाओं द्वारा इनकी परिधि में मूल्यांकन कराए जाने की व्यवस्था पर पहल किए जाने के बावजूद, गुणवत्ता का मुद्दा विकट एवं दुरूह बनता जा रहा है।

पिछले दशकों में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर शैक्षिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक सन्दर्भों में तेज़ी से बदलाव आने के फलस्वरूप शिक्षा, एवं विशेष तौर से, अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रमों में आमूलचूल परिवर्तन लाने की आवश्यकता अनुभूत हुई है। पाठ्यक्रमों को ज्ञान के उभरते नए क्षितिज, उन्हें नवीन कौशलों के विकास से सम्बन्धित आवश्कताओं, अभिवृत्तियों, जीवन कौशलों एवं जीवन मूल्यों पर आधारित करने तथा अपनी पहल पर अधिगम का सामर्थ्य विकसित कर सकने की सम्भावनों से परिपूर्ण बनाने की संस्तुति प्रायः शिक्षा के हर स्तर पर व्यक्त हुई है। हमारे यहाँ यह जिम्मेदारी विश्वविद्यालयों एवं केन्द्र तथा राज्य स्तर के विश्वविद्यालयों में शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा से जुड़े विभागों एवं संस्थानों को दी गयी है। अध्यापक शिक्षा के विशिष्ट प्रकार के संस्थान यथा : आंग्ल एवं विदेशी भाषा संस्थान, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, संस्कृत संस्थान एवं शारीरिक शिक्षा संस्थान भी इस दिशा में अपने दायित्व बोध से नहीं कतरा सकते। इस सभी प्रकार की अध्यापक शिक्षा की व्यवस्थाओं के पाठ्यक्रमों को बदलने के साथ पाठ्यक्रम क्रियान्वयन, मानिटरिंग एवं मूल्यांकन की पद्धतियों को भी क्रान्तिक रूप से परिवर्तित करने की जरूरत है जिससे उन्हें समग्र गुणवत्ता प्रबन्धन की ओर उन्मुख करने में सरलता हो तथा अन्ततोगत्वा इस प्रकार की अवधारणा पर आधारित लोकाचार (इथास) एवं उपसंस्कृति विकसित की जा सके।

सभी स्तरों पर विशिष्ट अनुक्षेत्रों के शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा पाठ्यक्रमों को दक्षता एवं मूल्यों पर आधारित रखने की दृष्टि से सिद्धान्त, व्यवहार एवं प्रायोगिकी के अंशों पर कितना समय दिया जाय, यह अध्यापक शिक्षा के प्रारम्भ से ही विवादास्पद मुद्दा रहा है। विडम्बना यह है कि अभी भी 'सिद्धान्तों' को पढ़ाया जाता है, व्यवहार एवं प्रायोनिकी पक्ष नितान्त दुर्बल एवं अप्रभावी रहते हैं। थोड़ी गहराई में जाने पर यह भी ज्ञात

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved. 

होगा कि 'सिद्धान्त' के नाम से पढ़ाए जाने वाले विषयों में सम्प्रत्ययों के विकास के स्थान पर सूचना को ही साध्य बनाने पर वरीयता दी जाती है। यह स्वीकार करने में कठिनाई नहीं होनी चाहिये कि शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के सन्दर्भ में सिद्धान्त एवं व्यवहार दोनों एक ही सिक्के के दो चेहरे हैं। परिनिष्ठित सिद्धान्त के अवलम्बन बिना अभ्यास अन्धा होता है तथा समर्थवान व्यवहार के न रहने से सिद्धान्त पंगु बना रहता है।

**भारतीय सन्दर्भ में शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा से सम्बन्धित मुद्दे**

पूर्वोक्त परिप्रेक्ष्य में विचार करने पर अवगत होगा कि आज़ादी प्राप्त होने के प्रारम्भिक चरणों से लेकर अब तक शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के कतिपय बुनियादी मुद्दे आज भी यथावत् बने हुए हैं। इन मुद्दों में प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं: कुशल, प्रतिबद्ध एवं भारतीय संस्कृति के शाश्वत् मूल्यों से जुड़े शिक्षकों की तैयारी कैसे सुनिश्चित हो ? शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के विविध स्तरों यथा: पूर्वप्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक एवं महाविद्यालयी व्यवस्थाओं के लिए तैयार की जाने वाली संस्थाओं में परस्पर सहयोग एवं तालमेल कैसे लाया जाय ? शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा को व्यावसायिक शिक्षा के विशिष्ट दर्जे का स्वरूप देने के लिए क्या पग उठाए जाने चाहिए ? शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा को सशक्त बनाते हुए उसे शिक्षा की अद्यतन अवधारणाओं एवं प्रौद्योगिकी (शैक्षिक प्रौद्योगिकी को समाहित करते हुए) के प्रभावी उपयोग का माध्यम कैसे बनाया जाय ? शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा को मूल्यों (यथा: आधारभूत मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य, आध्यात्मिक मूल्य, पर्यावरणजन्य मूल्य एवं संवैधानिक प्रतिबद्धता से जुड़े मूल्य) के विकास में प्रभावी उपकरण के रूप में विकसित करने हेतु उसे किस रूप में परिवर्तित, परिवर्द्धित एंव संशोधित किया जाए जिससे इसके सशक्तीकरण का मार्ग प्रशस्त हो ? शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के सभी स्तरों एवं विशिष्ट विषयों से सम्बन्धित पाठ्यक्रमों को एक ही छत्र के तहत गठित करते हुए उन्हें शनैः शनैः स्वायत्तशासी व्यवसाय अर्थात् विश्वविद्यालय का दर्जा किस प्रकार सुनिश्चित किया जाय ? विभिन्न संस्थानों के माध्यम से प्रतिवर्ष तैयार किये जाने वाले सेवापूर्व प्रशिक्षकों तथा उनके प्रशिक्षण स्तर के अनुरूप शैक्षणिक संस्थाओं में उनकी खपत होने की सम्भावनाओं को 'माँग एवं आपूर्ति' व्यवस्था के तहत लाकर राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरों पर प्रशिक्षित बेरोज़गारों की संख्या को कैसे घटाया जाय ? शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा को शैक्षणिक शोधों की मुख्यधारा में लाने हेतु स्वदेशी शैक्षणिक प्रतिमान, शैक्षणिक रचनाकौशल एवं स्वनियंत्रित अधिगम के मानक कैसे विकसित किए जाएं ? शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा में स्तरीय एवं गुणवत्तापूर्ण सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु क्या प्रभावी पग उठाए जायें ? सभी स्तरों पर शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा को सार्थक एवं गुणवत्तापूर्ण कैसे बनाया जायें ? इसके अतिरिक्त सूचना एवं सम्प्रेषण तकनालॉजी के समर्थन से अध्यापक शिक्षा द्वारा विद्यार्थी की पहल पर अधिगम प्रक्रिया में सक्रियता एवं सर्जनशीलता के आयाम विकसित करना, अध्यापक शिक्षा की संस्थाओं के सामर्थ्य को क्षमता संवर्धन की परिधि में लाकर विविध युक्तियों द्वारा उन्हें सशक्त उपकरण के रूप में प्रायोजित करना, शिक्षण, अधिगम एवं मूल्यांकन की प्रक्रियाओं से सम्बन्धित प्रवीणताओं के विकास को शिक्षा के सेवापूर्व एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाना-ये सभी बिन्दु आज भारतीय शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के महत्वपूर्ण मुद्दे बने हुए हैं।

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved. 

कहना होगा कि ये सभी मुद्दे शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा के वैश्विक, सार्क एवं भारतीय सन्दर्भ को आन्दोलित किये हुए हैं। इनसे जुड़ी चुनौतियों का सामना करने के लिए हमारी व्यवस्था में किस प्रकार की तत्परता एवं जागरूकता विद्यमान है ? हमारे पास इनके लिए क्या ठोस कार्य-योजनाएं एवं प्रस्ताव उपलब्ध हैं, जिन पर अमल करना है ? ये सभी प्रश्न सामयिक महत्व रखते हैं। सभी शिक्षक-प्रशिक्षण शिक्षा की संस्थाओं को एकजुट होकर संवाद के तरीकों से उनके उत्तर ढूँढ़ने होंगे। क्या हम इसके लिए उद्यत हैं ? ये मौलिक प्रश्नचिन्ह प्रायः सभी सार्क देशों में भी मुखरित हैं।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, आर0, ए0-अध्यापक शिक्षा, आर0लाल बुक डिपो, मेरठ
2. लाल, रमन बिहारी-अध्यापक शिक्षा, रस्तोगी प0, मेरठ
3. गुप्ता, एस0पी0-आधुनिक शिक्षा का ताना-बाना, शारदा पु0 भवन, इलाहाबाद
4. पाण्डेय, के0पी0-अध्यापक शिक्षा, वाराणसी प्रकाशन, वाराणसी
5. पाण्डेय रामसकल- अध्यापक शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
6. अन्वेषिका : शिक्षक शिक्षा की भारतीय पत्रिका अंक 2004, नवम्बर छब्म्ज्

IJAER

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved. 